माननीय न्यायमूर्ति स्वतंत्र कुमार के समक्ष

जयवीर सिंह, - याचिकाकर्ता।

बनाम

राज कुमार और अन्य, उत्तरदाता।

सी.ओ.सी.पी. 1995 का 1361 .

12 सितंबर, 1996

अवमानना न्यायालय अधिनियम, 1971 - धारा 12 - 12 अक्टूबर, 1994 को पारित याचिकाकर्ता की बस को जब्त न करने का न्यायालय का अंतरिम निर्देश - प्रतिवादी-राज्य लिखित बयान दाखिल करना और दावा करना - स्थगन आदेश लागू करना - अवमानना याचिका में प्रतिवादी पक्ष ने कहा कि स्थगन आदेश की प्रति विश्वास के योग्य नहीं है - एक तरफ जवाबी हलफनामे में बचाव व्यवस्था और अदालत द्वारा आदेश का कोई उल्लंघन पाए जाने की स्थिति में बिना शर्त माफी भी मांगी जाती है - कार्रवाई के औचित्य के सामने इस तरह की माफी अस्वीकार्य है - अदालत की उदारता और न्याय की महिमा के बीच संतुलन न्याय की महिमा और प्रशासन को कम करने की कीमत पर नहीं बढ़ता है - माफी स्वीकार नहीं की जाती है और दोषी अधिकारियों को अदालत की अवमानना के लिए दंडित किया जाता है, 15 दिनों के लिए नागरिक कारावास भुगतना पड़ता है और प्रत्येक को 1,000 रुपये का जुर्माना देना पड़ता है।

अभिनिर्धारित :-

प्रतिवादियों द्वारा यह बचाव पक्ष कि आदेश की प्रति उन्हें नहीं दी गई थी, किसी भी विश्वास के योग्य नहीं है और इस पर भरोसा नहीं किया जा सकता है। सबसे पहले, इस सरल कारण के लिए कि चीजों को विवेक की उचित भावना के साथ उनके सामान्य पाठ्यक्रम में होने के लिए लिया जाना चाहिए था, सभी को कार्य करना चाहिए था। यह विश्वास करना बहुत मुश्किल है कि एक व्यक्ति जिसने उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है और न्यायालय ने पार्टी के पक्ष में एक आदेश पारित किया है, पार्टी ऐसे आदेशों का लाभ नहीं लेगी जो सामान्य कार्य प्रक्रिया में आवश्यक होगा। सामान्य मानव आचरण के किसी भी उचित मानक से विचार किया जाए, तो इन उत्तरदाताओं द्वारा पेश किया गया बचाव सही प्रतीत नहीं होता है। विशेष रूप से एक ऐसे व्यापार में जहां हर दिन वाहनों का चलना याचिकाकर्ता के लिए आय का स्रोत है, वह आम तौर पर अपने व्यापार के सुचारू संचालन को सुनिश्चित करने के लिए सभी कदम उठाएगा, खासकर जब उसके पास उच्च न्यायालय की खंडपीठ से आदेश हो।

(पैरा 8 और 9)

यह भी अधिनिर्धारित किया गया :
यह कि इस माफी की मांग उद्देश्यहीन है और किसी भी तरह से उत्तरदाताओं की चूक के लिए गंभीर खेद नहीं है। न्यायालयों के आदेशों के उल्लंघन को उचित ठहराने में इस न्यायालय के समक्ष भी प्रतिवादियों के तथ्य और आचरण, मेरे मन में कोई संदेह नहीं छोड़ते हैं कि दी गई माफी यह नहीं दर्शाती है कि वे अपमानजनक थे और माफी अदालत को संतुष्ट करने के लिए केवल एक समीचीन था। इस प्रकार दी गई माफी को स्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह बिल्कुल भी पर्याप्त प्रायश्चित नहीं होगा।
(पैरा 16)

यह भी अधिनिर्धारित किया गया :
यह कि औचित्य और माफी साथ-साथ नहीं हो सकते क्योंकि वे दो चीजें हैं जो असंगत हैं। माफी को बचाव के रूप में कभी पेश नहीं किया जा सकता है। यह अपराध का अनुमान लगाता है और ईमानदारी से सच्ची माफी की पेशकश करने, ईमानदारी से खेद व्यक्त करने और अपराध के प्रायश्चित के इरादे से अवमानना करने की प्रार्थना करता है। इस प्रकार, एक तरफ प्रतिवादियों ने इस लंबी अवधि के लिए आदेश की जानकारी से इनकार किया है और निर्दोष होने की दलील दी है और उचित ठहराया है, और दूसरी तरफ, यह अर्थहीन माफी पेश की जा रही है। प्रतिवादियों का पूरा आचरण स्पष्ट रूप से इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित 12 अक्टूबर, 1994 के आदेश के जानबूझकर और जानबूझकर उल्लंघन को दर्शाता है। इसके अलावा इसने स्पष्ट रूप से न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप किया है।
(पैरा 19)

यह भी अधिनिर्धारित किया गया :
आगे कहा गया: मैं इन प्रतिवादियों को 15 दिनों की अवधि के लिए सिविल कारावास की सजा भुगतने और प्रत्येक को 1,000 रुपये का जुर्माना देने का निर्देश देता हूं। तदनुसार अवमानना याचिका की अनुमति दी जाती है।
(पैरा 21)

याचिकाकर्ता की ओर से अधिवक्ता एस. एस. दहिया।
प्रतिवादी संख्या 2 और 3 के लिए हरियाणा के जिला अटॉर्नी एनएस भिंडर।

निर्णय

न्यायमूर्ति *स्वतंत्र कुमार*

1. याचिकाकर्ता जयवीर सिंह ने 1994 की सिविल रिट याचिका 14980 दायर की थी, जिसमें प्रतिवादियों को उचित रिट आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कहा गया था कि याचिकाकर्ता को झूपा मार्ग के माध्यम से राजगढ़ हिसार पर अपनी बसों का संचालन करने की अनुमति दी जाए और आगे याचिकाकर्ता की बसों को जब्त न किया जाए। परमिट जारी करने के संबंध में विवाद मुख्य रूप से इस कारण से उत्पन्न हुआ कि परमिट जारी करने वाले राज्य के अलावा अन्य राज्य द्वारा प्रतिहस्ताक्षरित किया जाना है। इस मामले में, परमिट को हरियाणा राज्य द्वारा प्रति-हस्ताक्षरित

किया जाना था। इसके परिणामस्वरूप रिट याचिका दायर की गई। इस स्तर पर रिट याचिका में किए गए अनुरोध का उल्लेख करना उचित होगा।

"इसलिए, सम्मानपूर्वक निम्नानुसार प्रार्थना की जाती है: -

(i) प्रतिवादी को परमादेश या किसी अन्य रिट, आदेश या निर्देश की प्रकृति में एक रिट जारी की जाए जिसमें उन्हें याचिकाकर्ता की बस को जब्त न करने का निर्देश दिया जाए;

(ii) प्रतिवादियों को एक उपयुक्त रिट, आदेश या निर्देश जारी किया जाए जिसमें उन्हें कानून के अनुरूप अपने कर्तव्य का पालन करने और कानून के अधिकार के बिना जुर्माना न लगाने का निर्देश दिया जाए।

(iii) कोई अन्य उपयुक्त आदेश या निर्देश जो यह माननीय न्यायालय मामले की परिस्थितियों में उपयुक्त समझे, जारी किया जाए।

(iv) प्रतिवादियों को पूर्व नोटिस जारी करने और रिट याचिकाओं के साथ अनुलग्नकों की प्रमाणित प्रतियां दाखिल करने की आवश्यकता को समाप्त किया जाए। अनुलग्नक पी -1 और पी - 2 की फोटो प्रतियों की अनुमति दी जा सकती है।

(v) प्रतिवादी को याचिकाकर्ता की बस को जब्त करने से रोकने के लिए एक अंतरिम आदेश जारी किया जाए और कोई अन्य अंतरिम आदेश भी पारित किया जाए जिसे यह माननीय न्यायालय उचित समझे।

2. याचिका में उपर्युक्त कथनों को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय ने 12 अक्तूबर, 1994 को निम्नलिखित आदेश पारित किया है -

"उपस्थित: श्री एसएस दहिया, एडवोकेट। प्रतिवादियों को 16 नवम्बर, 1994 के लिए प्रस्ताव की सूचना। 1994 के सी.डब्ल्यू.पी. संख्या 11610 के साथ उस याचिका में पहले से तय तारीख पर पेश किया जाए। अंतरिम निर्देश उन्हीं शर्तों में जारी किए जाते हैं जैसे कि उपरोक्त रिट याचिका में जारी किए गए हैं।

12 अक्टूबर, 1994।

एसडी/-

एस.एस. ग्रेवाल,

ए.एस. नेहरा,

न्यायाधीश

3. 1994 की उपर्युक्त सिविल रिट याचिका संख्या 11610 में न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित आदेश निम्नानुसार है: -

माननीय पीठ ने कहा, "प्रतिवादियों को नोटिस जारी किया गया है। प्रतिवादियों की ओर से हरियाणा के उप महाधिवक्ता श्री पीएस कादियान द्वारा प्रस्ताव की सूचना स्वीकार कर ली गई है, जो 5 सितंबर, 1994 को इसका जवाब दाखिल कर सकते हैं।

इस बीच, प्रतिवादियों को निर्देश दिया जाता है कि वे याचिकाकर्ता की बस को जब्त न करें।"

4. प्रतिवादियों के उपस्थित होने के बाद भी ये अंतरिम आदेश जारी रहे और ये रिट याचिकाएं अभी भी संबंधित पीठ के समक्ष लंबित हैं। इन तथ्यों पर, अदालत की अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 12 के तहत वर्तमान याचिका में याचिकाकर्ता की शिकायत यह है कि प्रतिवादी संख्या 1 से 3 ने जानबूझकर और जानबूझकर इस न्यायालय के निर्देश का उल्लंघन किया है। याचिकाकर्ता के अनुसार, प्रतिवादियों विशेष रूप से प्रतिवादी संख्या 2 और 3 ने दुर्भावना और पूर्वाग्रहपूर्ण तरीके से याचिकाकर्ता की बस संख्या आर. एन. के 25 को दो मौकों पर जबरन जब्त कर लिया, जो अदालत के आदेश का पूरी तरह से उल्लंघन और अवज्ञा है। याचिकाकर्ता के अनुसार, माननीय उच्च न्यायालय ने प्रतिवादियों को आदेश दिया था। नतीजतन, वे रिट याचिकाओं में उपस्थित हुए थे और विशेष रूप से उन्हें वास्तव में दोनों अवसरों पर आदेश की प्रति दिखाई गई थी, लेकिन इन प्रतिवादियों को आदेश दिखाए जाने के बावजूद, प्रतिवादियों ने निषेधाज्ञा (उन्हें दिखाए गए आदेश) की प्रति फाड़ दी और कहा कि उन्हें उच्च न्यायालय के आदेशों की परवाह नहीं है। नतीजतन, याचिकाकर्ता अपने पक्ष में निषेधाज्ञा आदेश के बावजूद असहाय दर्शक था, उसकी बस को जब्त कर लिया गया था। 4,000 रुपये का भुगतान करने के बाद जो प्रतिवादियों द्वारा वाहन को जब्त करने के लिए दो दिनों के लिए जुर्माना के रूप में लगाया गया था याचिकाकर्ता बड़ी कठिनाइयों के साथ वाहनों को छोड़ने में सक्षम रहा। वाहनों को जब्त करने वाले चालान की प्रतियां याचिका में अनुलग्नक पी -1 और पी -2 के रूप में संलग्न हैं, जबकि उसी दिन तुरंत लगाए गए जुर्माने की रसीदें क्रमशः अनुलग्नक पी -4 और पी -5 के रूप में इस याचिका के अनुलग्नक हैं। याचिकाकर्ता का यह उत्पीड़न स्पष्ट रूप से शारीरिक उत्पीड़न के अलावा था, उसे और उसके यात्रियों को वित्तीय नुकसान से गुजरना पड़ता है जो याचिकाकर्ता को हुआ है। दिनांक 4 दिसम्बर, 1995 के आदेश के तहत इस न्यायालय ने कारण बताओ नोटिस जारी किया कि क्यों न उनके विरुद्ध अवमानना की कार्यवाही शुरू की जाए और उसे 26 फरवरी, 1996 को लौटाया जा सके। हालांकि, प्रतिवादी नंबर 1 व्यक्तिगत रूप से पेश हुए हैं और यहां तक कि यह दिखाने के लिए एक हलफनामा भी दायर किया है कि उन्होंने अक्टूबर, 1995 में अपने पद का प्रभार छोड़ दिया था, जबकि माना जाता है कि हरियाणा के राज्य परिवहन नियंत्रक के सचिव के रूप में अपने पद का प्रभार छोड़ने के बहुत बाद नवंबर, 1995 में बस को जब्त कर लिया गया था।इस तथ्य को याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा विवादित नहीं किया गया था और वास्तव में उन्होंने स्वीकार किया कि प्रतिवादी नंबर 1 श्री राज कुमार को गलती से पार्टी के रूप में शामिल किया गया था। इस स्वीकृत तथ्य को ध्यान में रखते हुए, दिनांक 18 जुलाई, 1996 के आदेश द्वारा प्रतिवादी नंबर 1 का नाम याचिका में पक्षकारों की सरणी से हटाने का निर्देश दिया गया था। याचिकाकर्ता के वकील ने आज तक इस पद के वर्तमान पदाधिकारी को पक्षकार नहीं बनाया है।

5. प्रतिवादी संख्या 2 और 3 ने मुख्य याचिका में अलग-अलग जवाब दाखिल किया है। अपने जवाब में प्रतिवादी नंबर 3 का रुख यह है कि उन्होंने 15 मई, 1995 को हरियाणा रोडवेज, हिसार के महाप्रबंधक के पद पर कार्यभार ग्रहण किया। कहा जाता है कि न्यायालय का आदेश उन्हें कभी नहीं दिया गया और इस प्रकार, 12 अक्टूबर, 1994 के आदेश के उल्लंघन का कोई सवाल ही नहीं था। अन्य सभी आरोपों से इनकार किया जाता है। प्रतिवादी संख्या 3 श्री प्रीतम लाल, परिवहन उप

निरीक्षक ने अपने अलग उत्तर में प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए स्थगन के आदेश को उन्हें कभी नहीं दिया गया था और उन्हें 21/24 नवंबर, 1995 के आदेश की प्रति भी नहीं दी गई थी। यह प्रतिवादी स्वीकार करता है कि वाहनों को जब्त कर लिया गया था और 2,000 रुपये का जुर्माना लगाया गया था और उसके बाद वाहनों को छोड़ दिया गया था।

6. इस उत्तरदाता के अनुसार, वास्तव में, प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा भी इस घटना का कोई खंडन नहीं किया गया है। इन प्रतिवादियों के अनुसार, उन्होंने विभिन्न उल्लंघनों के लिए बसों को जब्त कर लिया था और माना कि हरियाणा के परमिट के बिना उस मार्ग पर बस चलाने के लिए भी।उत्तरदाता संख्या 3 के उत्तर में निम्नलिखित पैराग्राफ को इस स्तर पर पुन: प्रस्तुत करने की आवश्यकता है:-

"याचिका के पैरा नंबर 3 के जवाब में कहा गया है कि 21 नवंबर, 1995 को दोपहर 12.20 बजे याचिकाकर्ता की बस संख्या आरएनके-25 की हिसार के बस स्टैंड पर जांच की गई और उसे हरियाणा के रूट परमिट के बिना पंजीकरण प्रमाण पत्र के बिना राजगढ़ से हिसार ले जाने वाले 50 यात्रियों को जब्त कर लिया गया। उस समय बस का चालक इस माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित स्थगन आदेश प्रस्तुत नहीं कर सका।याचिकाकर्ता का कार्यालय बस स्टैंड हिसार के ठीक सामने है और बस के चालक ने याचिकाकर्ता को मौके पर बुलाया और याचिकाकर्ता भी इस माननीय न्यायालय द्वारा दिए गए उपरोक्त दस्तावेजों और स्थगन आदेश में से कोई भी प्रस्तुत नहीं कर सका।इन परिस्थितियों में मोटर वाहन अधिनियम, 1988 की धारा 207 के तहत बस को जब्त कर लिया गया था। याचिकाकर्ता ने उसी दिन सचिव, क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण, हिसार के समक्ष चालान में उल्लिखित अपराध को जोड़ा और 2,000 रुपये का भुगतान किया। इसके बाद याचिकाकर्ता की बस उसी दिन रिहा हो गई।"

7. याचिकाकर्ता की ओर से दायर प्रत्युत्तर में, यह कहा गया है कि सहायक रजिस्ट्रार (नियम) द्वारा प्रतिवादियों को तत्काल अनुपालन के लिए अक्टूबर, 1994 में ही स्थगन का आदेश भेजा गया था, आदेश की फोटोस्टेट प्रति प्रतिवादियों को 21/24 नवंबर, 1995 को दिखाई गई थी और आरोप लगाया गया था कि स्थगन आदेश प्रस्तुत नहीं किया गया था। यह प्रतिवादियों की ओर से तथ्यात्मक रूप से गलत और दुर्भावनापूर्ण कार्रवाई है।

8. इस प्रकार इस न्यायालय के समक्ष रिकॉर्ड से निकलने वाले तथ्य न केवल प्रतिवादी संख्या 2 और 3 की ओर से न्यायालय के आदेशों का उल्लंघन करने के इरादे को इंगित करते हैं, बल्कि वास्तव में इन प्रतिवादियों की ओर से माननीय अदालत द्वारा पारित आदेश की अवज्ञा या दरकिनार करने के लिए वास्तविक जानबूझकर और जानबूझकर कार्य करने की प्रवृत्ति को दर्शाते हैं। प्रतिवादियों की ओर से दायर जवाब न केवल अस्पष्ट हैं, बल्कि कुछ हद तक याचिकाकर्ता के मामले का समर्थन भी करते हैं। इस तथ्य पर विवाद नहीं किया जा सकता है कि एक ही प्रश्न से जुड़ी कई रिट याचिकाएं थीं और संबंधित मामलों में भी न्यायालय की खंडपीठ द्वारा स्थगन आदेश दिए गए थे।

प्रतिवादियों द्वारा पेश किया गया बचाव कि आदेश की प्रति उन्हें नहीं दी गई थी, किसी भी विश्वास के योग्य नहीं है और इस पर भरोसा नहीं किया जा सकता है।

9. सबसे पहले, इस सरल कारण के लिए कि चीजों को विवेक की उचित भावना के साथ उनके सामान्य पाठ्यक्रम में होने के लिए लिया जाना चाहिए था, सभी को कार्य करना चाहिए था। यह विश्वास करना बहुत मुश्किल है कि एक व्यक्ति जिसने माननीय उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है और न्यायालय ने पार्टी के पक्ष में एक आदेश पारित किया है, पार्टी ऐसे आदेशों का लाभ नहीं लेगी जो सामान्य कार्य के दौरान आवश्यक होगा।सामान्य मानव आचरण के किसी भी उचित मानक से विचार किया जाता है तो , इन उत्तरदाताओं द्वारा पेश किया गया बचाव सही प्रतीत नहीं होता है। विशेष रूप से एक ऐसे व्यापार में जहां हर दिन वाहनों का चलना याचिकाकर्ता के लिए आय का स्रोत है, वह आम तौर पर अपने व्यापार के सुचारू संचालन को सुनिश्चित करने के लिए सभी कदम उठाएगा, खासकर जब उसके पास उच्च न्यायालय की खंडपीठ से आदेश हो। यहां तक कि अगर तर्कों के लिए यह मान लिया जाए कि 21 नवंबर, 1995 को याचिकाकर्ता के पास स्थगन आदेश की प्रति नहीं थी, तो यह बहुत कम संभावना है कि उसने 24 नवंबर, 1995 को स्थगन आदेश की प्रति पेश करना सुनिश्चित नहीं किया होगा, विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उसने 21 नवंबर1995 में ही दंड के रूप में 2,000 रुपये का भुगतान किया था। प्रतिवादियों का कहना है कि न केवल बस के चालक के पास स्थगन आदेश या उसकी प्रति नहीं थी, बल्कि याचिकाकर्ता के कार्यालय के पास भी आदेश की प्रमाणित प्रति या आदेश की फोटो स्टेट कॉपी नहीं थी, जिसे उनके संज्ञान में लाया जा सकता था। याचिकाकर्ता के अनुसार, 21 नवंबर, 1995 को आदेश की प्रति इन प्रतिवादियों को दी गई थी, लेकिन उन्होंने आदेश की प्रति फाड़ दी और फिर 24 नवंबर, 1995 को ड्राइवर शीश पाल ने आदेश की फोटोस्टेट कॉपी दी थी, जिसे प्रतिवादियों ने यह कहते हुए नजरअंदाज कर दिया था कि वे अदालत के आदेश की परवाह नहीं करेंगे। याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय के सहायक रजिस्ट्रार (रिट) द्वारा 14 अक्टूबर, 1994 को राज्य परिवहन आयुक्त, हरियाणा, चंडीगढ़ के साथ-साथ सचिव, क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण, हिसार को संबोधित पत्र को संलग्न किया है, जो अब याचिकाकर्ता के पक्ष में पारित अंतरिम आदेश की प्रति संलग्न करता है। अनुलग्नक पी-6 का संगत भाग निम्नानुसार है:-
"मुझे निर्देश दिया जाता है कि मैं इस मामले में इस न्यायालय द्वारा पारित 12 अक्टूबर, 1994 के आदेश की एक प्रति तत्काल अनुपालन के लिए अग्रेषित करूं। साथ में 1994 के सीडब्ल्यूपी 11610 में पारित 25 अगस्त, 1994 के आदेश की प्रति भी शामिल है।“

इस प्रकार वर्तमान मामले में सभी प्रतिवादियों और विशेष रूप से प्रतिवादी नंबर 2 से अपेक्षा की गई थी कि वे न्यायालय के आदेश का पालन करें और सभी संबंधित अधीनस्थ को निर्देश दें कि वे सड़क परमिट की चूक के लिए याचिकाकर्ता के वाहनों को जब्त न करें।प्रतिवादियों द्वारा इस संबंध में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है। प्रत्युत्तर में याचिकाकर्ता के इन आरोपों को आदेश प्राप्त न होने के कारण फिर से खारिज कर दिया गया है। प्रतिवादी संख्या 3 ने 5 सितंबर, 1995

को अपनी ड्यूटी ज्वाइन की थी और दोनों घटनाएं उनके ड्यूटी ज्वाइन करने की अवधि के बाद की हैं। यहां यह उल्लेख करना भी प्रासंगिक हो सकता है कि रिट याचिका में प्रतिवादी के विद्वान वकील 19 दिसंबर, 1994 को पहली बार उपस्थित हुए थे और रिट याचिका में जवाब भी 10 फरवरी, 1995 को दायर किया गया था।इन परिस्थितियों में यह विश्वास करना मुश्किल है कि संबंधित अधिकारी जो विचाराधीन मार्ग के परमिट को विनियमित करने वाला था, उसे रिट याचिका में अदालत द्वारा पारित कार्यवाही और आदेशों के बारे में भी पता नहीं होगा।

10. उपरोक्त तथ्यों का संचयी प्रभाव और उत्तरदाताओं के आचरण से और यहां तक कि उनके द्वारा इस न्यायालय के समक्ष दायर किए गए उत्तर से आवश्यक अपरिहार्य निष्कर्ष यह है कि इन प्रतिवादियों द्वारा न्यायालय के आदेशों का जानबूझकर उल्लंघन किया गया था।

11. इस न्यायालय की खंडपीठ ने न्यायालय द्वारा खुद संज्ञान लिया गया बनाम एनएस कंवर 1995 (1) आर सी आर 201 पर न्यायालय के मामले में निम्नानुसार निर्णय दिया है: -

'जानबूझकर' शब्द के उपरोक्त उद्धृत शब्दकोश अर्थ और न्यायालयों के निर्णयों से, यह निष्कर्ष निकालना उचित है कि न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 2 (बी) में प्रयुक्त 'जानबूझकर' 'अवज्ञा' शब्द का अर्थ यह नहीं लगाया जा सकता है कि किसी कार्य को सभी मामलों में सिविल अवमानना के रूप में माना जाना चाहिए। यदि कोई पक्ष जो न्यायालय के आदेश के बारे में पूरी तरह से जानता है या न्यायालय के आदेश के परिणामों और निहितार्थों के बारे में जागरूक और जागरूक है, इसे अनदेखा करता है या अदालत के आदेश का उल्लंघन करता है, तो यह माना जाना चाहिए कि अवज्ञा जानबूझकर है। हमारे विचार में आमतौर पर कार्य या चूक के पीछे वास्तविक इरादे को साबित करना कभी भी व्यावहारिक नहीं होता है। एक न्यायालय केवल निष्पक्ष रूप से प्रश्न का उत्तर दे सकता है और यह किए गए कार्य से इरादे का अनुमान लगा सकता है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति को अपने कार्य के संभावित परिणाम का इरादा माना जाता है।“

12. उत्तरदाता संख्या 2 और 3 सरकारी कर्मचारी हैं और उनसे निष्पक्ष और अनुशासित तरीके से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने की उम्मीद की जाती है। वे कुछ वैधानिक प्रावधानों को आगे बढ़ाने के लिए कार्य करते हैं और उनका कोई भी अधिनियम उनके अधिकार क्षेत्र से बाहर नहीं होना चाहिए और कभी भी न्यायालय के आदेश को दरकिनार करने के इरादे से नहीं होना चाहिए। उनके कर्तव्य के साथ एक अंतर्निहित दायित्व जुड़ा हुआ है कि उन्हें कानून, नियमों के अनुसार कार्य करना चाहिए और अदालत के आदेशों का पालन करना चाहिए।वे ऐसे आदेशों का उल्लंघन उन्हे न ही करना चाहिए और न ही ऐसा करने में सहायक नहीं हो सकते हैं और फिर कमजोर आधार पर इस तरह के उल्लंघन के लिए अपने आचरण को सही ठहराने की कोशिश करनी चाहिए।इस स्तर पर मैं एडमंड डेवलेव, एलजे की टिप्पणियों का उल्लेख करना उचित समझता हूं जो निम्नानुसार हैं:-

“"..... और अगर वास्तव में ऐसा होता है कि उसे अपने अपराध के लिए दंडित किए बिना रहना पड़ता है, तो न्याय क्षितिज से गायब हो जाता है और कानून को बाधित किया जाता है।“

13. यह सच है कि न्यायालय के आदेशों के उल्लंघन को साबित करने की जिम्मेदारी शुरू में याचिकाकर्ता पर होती है जो अदालत से संपर्क करता है, लेकिन एक बार जब इस प्राथमिक बोझ को अदालत की संतुष्टि के अनुसार उतार दिया जाता है , तो यह उत्तरदाताओं को इसके विपरीत दिखाने और साबित करने का काम है। माना जाता है कि इन प्रतिवादियों के कर्तव्यों की प्रकृति बसों की जांच करना है और यदि आवश्यक हो, तो मोटर वाहन अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों और सक्षम अधिकारियों द्वारा बनाए गए अन्य नियमों के उल्लंघन के लिए उन्हें जब्त कर लिया जाए।याचिकाकर्ता और प्रतिवादी दोनों न केवल एक-दूसरे के दिन-प्रतिदिन के कामकाज से परिचित होंगे, बल्कि इसके बारे में पूरी तरह से अवगत होंगे। प्रतिवादियों के कर्तव्यों के सामान्य पाठ्यक्रम में उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए स्थगन का आदेश उनके ध्यान में आना चाहिए था और किसी भी मामले में मेरे मन में कोई संदेह नहीं है कि यह वास्तव में संबंधित तिथियों पर उनके ध्यान में लाया गया था। यह कल्पना करना भी अजीब है कि एक वर्ष से अधिक की अवधि के लिए उत्तरदाताओं को अदालत के आदेशों के बारे में पता नहीं होगा जब बस को उसी मार्ग पर चलाया जा रहा था।
14. प्रतिवादियों द्वारा उठाए गए आचरण और बचाव का मुख्य उद्देश्य न्यायालय के आदेशों की अनभिज्ञता की दलील देकर न्याय के प्रशासन में बाधा डालना है। कानून को इस तरह के अपमान को बर्दाश्त नहीं करना चाहिए। जेनिसन बनाम बैकर (1972 ऑल इंग्लैंड रिपोर्ट 997 पृष्ठ 1006 पर) में, यह निम्नानुसार देखा गया था: -
    उन्होंने कहा, 'कानून को चुपचाप बैठे हुए नहीं देखा जाना चाहिए, जबकि जो लोग इसकी अवहेलना करते हैं वे मुक्त हो जाते हैं और जो इसकी सुरक्षा चाहते हैं वे उम्मीद खो देते हैं.'

15. इन दोनों प्रतिवादियों की ओर से पेश वकील ने तर्क दिया कि इन प्रतिवादियों ने याचिकाकर्ता की बस को रूट परमिट के उल्लंघन के लिए नहीं, बल्कि कई अन्य अपराधों के लिए चुनौती दी थी, जो उन्होंने मोटर वाहन अधिनियम के प्रावधानों के तहत किए हैं। उन्होंने मोटर वाहन अधिनियम की धारा 207 (इसके बाद अधिनियम के रूप में संदर्भित) के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए अन्य उल्लंघनों के लिए बसों को जब्त कर लिया था।

16. उत्तरदाताओं की ओर से यह तर्क फिर से भ्रामक है। यह सच है कि याचिका के साथ संलग्न चालान फॉर्म अनुलग्नक पी/1 और पी/2 से पता चलता है कि याचिकाकर्ता की बस को अन्य अपराधों के लिए जब्त किया गया था, लेकिन अधिक सच यह है कि याचिकाकर्ता की बस को "बिना रूट परमिट हरियाणा" चलाने के लिए जब्त कर लिया गया था।याचिकाकर्ता द्वारा इस उल्लंघन को विशेष रूप से चालान फॉर्म और इस तरह के उल्लंघन के लिए लगाए गए जुर्माने में इंगित किया गया है। माननीय डिवीजन बेंच के आदेश के सामने अपनी मनमानी दिखाने में प्रतिवादियों का यह रवैया पर्याप्त रूप से न्यायालय के आदेशों के जानबूझकर उल्लंघन को इंगित करता है। प्रतिवादियों की

कार्रवाई ने निश्चित रूप से न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप किया है और उत्तरदाताओं की ओर से स्पष्ट इरादा है कि वे इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित आदेशों की परवाह न करें।अनुबंध पी/2 में, चालक का नाम विशेष रूप से दर्ज किया गया है, जबकि अनुलग्नक पी/1 में, मालिक का नाम दर्ज किया गया था जो स्वयं वाहन चला रहा था और याचिकाकर्ता द्वारा यह कहा गया है कि उस समय उसके पास स्थगन आदेश की प्रति थी और वास्तव में उसने इन प्रतिवादियों को वही दिखाया था। कुछ हद तक जानबूझकर, न्यायालय के आदेश का उल्लंघन और इसकी जानकारी उपस्थित परिस्थितियों से एकत्र की जानी चाहिए। वर्तमान मामले में इस तरह की उपस्थित परिस्थितियां निश्चित रूप से भारी हैं और अदालत के लिए याचिकाकर्ता द्वारा सामने रखे गए मामले पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है।इसलिए, मैं इन प्रतिवादियों की ओर से पेश हुए विद्वान वकील की दलील को स्वीकार करने का इच्छुक नहीं हूं। वे अन्य कथित उल्लंघनों के लिए अधिनियम की धारा 207 के तहत शक्तियों के प्रयोग की आड़ में, प्रतिवादी खंडपीठ द्वारा पारित आदेश को निराश या अप्रभावी नहीं कर सके। इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा 12 अक्टूबर, 1994 को पारित आदेश पर प्रतिवादी संख्या 2 और 3 द्वारा स्पष्ट और स्पष्ट, जानबूझकर और जानबूझकर उल्लंघन किया गया है।यह मुझे हलफनामे के सामान्य अंतिम पैराग्राफ पर विचार करने के लिए लाता है, जिसका प्रासंगिक भाग निम्नानुसार है:

"इस संबंध में दुराचारी की ओर से कोई अनादर नहीं किया गया है। फिर भी माननीय उच्च न्यायालय किसी भी स्तर पर पाता है कि माननीय उच्च न्यायालय के आदेश का अभिसाक्षी द्वारा कोई उल्लंघन हुआ है, तो अभिसाक्षी बिना किसी शर्त के माफी देगा "

मुझे यह कहने में कोई संदेह नहीं है कि इस माफी की मांग उद्देश्यहीन है और प्रतिवादियों द्वारा किसी भी तरह से की गई चूक के लिए गंभीर खेद नहीं है। उपरोक्त तथ्य और उनके द्वारा न्यायालय के आदेशों के उल्लंघन को उचित ठहराने में इस न्यायालय के समक्ष प्रतिवादियों के आचरण से मेरे मन में कोई संदेह नहीं रह जाता है कि दी गई माफी यह नहीं दर्शाती है कि वे अपमानजनक थे और माफी केवल शांत करने के लिए समीचीन नहीं थी।इस प्रकार मांगी गई माफी स्वीकार नहीं की जा सकती क्योंकि यह पर्याप्त प्रायश्चित नहीं होगा। (कुलदीप रस्तोगी बनाम विश्वनाथ ए.आई.आर. 1979, दिल्ली 202)।

17. एम.वाई. शरीफ बनाम नागपुर उच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों 1955 (1) एस.सी.आर. 757 के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की: -

"अदालत की अवमानना के लिए कार्यवाही में माफी के संबंध में, यह अच्छी तरह से तय है कि माफी उनके अपराध के दोषी को शुद्ध करने के लिए बचाव का हथियार नहीं है; न ही यह एक सार्वभौमिक रामबाण के रूप में काम करने का इरादा है, लेकिन इसका उद्देश्य वास्तविक पश्चाताप का प्रमाण होना है"।

18. न्यायालय को इस अधिनियम के उपबंधों के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग करते समय उदारता और न्याय की महिमा के बीच संतुलन बनाना होता है। जब भी स्थिति की मांग होती है, न्याय अपनी उदारता दिखा सकता है लेकिन न्याय की महिमा की कीमत पर नहीं। दूसरे शब्दों में, इसे हमेशा न्याय की महिमा और न्याय के प्रशासन के पक्ष में झुकना चाहिए, बजाय इसके कि अवमाननाकर्ताओं को दंडित न किया जाए और अदालत के आदेशों के ऐसे उल्लंघनों की पुनरावृत्ति के लिए एक

संरक्षित याचिका खोली जाए। वर्तमान मामले में प्रतिवादियों ने अपने आचरण को उचित ठहराया है, लेकिन जब उन्होंने पाया कि अदालत का रवैया उनके रुख के अनुकूल नहीं है, तो वे माफी मांगने के लिए पीछे हट गए। सच्ची माफी का अर्थ श्री माननीय न्यायमूर्ति जसपाल सिंह ने न्यायालय द्वारा खुद संज्ञान लिया बनाम बी. डी. कौशिक 1991 (4) दिल्ली लॉइअर 316 पृष्ठ 341, (पूर्ण न्यायालय) में निम्नलिखित तरीके से वर्णित किया था: -

"माफी दिल की बोली है। पछतावा इसका बीज है। यह प्रायश्चित द्वारा पोषित होता है और कुछ आध्यात्मिक सार द्वारा बनाए रखा जाता है। यह अनुग्रह की स्थिति है। क्या यह माफी थी? घटनाओं का क्रम और कार्यवाही सच्चाई को उजागर करती है। और सच्चाई यह है कि यह माफी नहीं बल्कि तमाशा था। यह दिल से नहीं बल्कि दांतों से उपजा है।

19. यह कानून का समान रूप से स्थापित सिद्धांत है कि औचित्य और माफी साथ-साथ नहीं चल सकते क्योंकि वे दो चीजें हैं जो असंगत हैं। माफी को बचाव के रूप में कभी पेश नहीं किया जा सकता है। यह अपराध का अनुमान लगाता है और ईमानदारी से सच्ची माफी की पेशकश करने, ईमानदारी से खेद व्यक्त करने और अपराध के प्रायश्चित के इरादे से अवमानना करने की प्रार्थना करता है। इस प्रकार, एक तरफ प्रतिवादियों ने इस लंबी अवधि के लिए आदेश की जानकारी से इनकार किया है और निर्दोष होने की दलील दी है और उचित ठहराया है, और दूसरी तरफ, यह अर्थहीन माफी पेश की जा रही है। प्रतिवादियों का पूरा आचरण स्पष्ट रूप से इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित 12 अक्टूबर, 1994 के आदेश के जानबूझकर उल्लंघन को दर्शाता है। इसके अलावा, इसने स्पष्ट रूप से न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप किया है।
20. हमारी प्रणाली में न्यायालय का प्राथमिक विचार न्याय का उचित प्रशासन है। यह महान संस्था हमारे देश में लोकतंत्र की नींव है। न्याय प्रशासन में हस्तक्षेप इसकी प्रतिष्ठा के गौरव को कम करने के इरादे से और अदालत के आदेशों में बिना किसी उकसावे के हस्तक्षेप करने और इरादे और जानबूझकर अनादर करने के इरादे से अदालतों द्वारा शायद ही अनदेखा किया जा सकता है। यह सुनिश्चित करने के लिए शक्ति मौजूद है कि न्याय किया जाएगा। बड़े पैमाने पर जनता को एक व्यक्तिगत वादी से कम दिलचस्पी नहीं है और न्याय को प्रभावी ढंग से प्रशासित करने में बहुत वास्तविक रुचि है। जब तक इसे इस तरह प्रशासित नहीं किया जाता है, तब तक अधिकार और वास्तव में व्यक्ति की स्वतंत्रता नष्ट हो जाएगी। (सैल्मन, एल.जे., जेनिसन बनाम बेकर (1972) में, 1, ऑल ईआर 997।
21. उपर्युक्त कारणों के लिए मेरा दृढ़ मत है कि प्रतिवादी संख्या 2 और 3 ने जानबूझकर 12 अक्टूबर, 1994 के खंडपीठ के आदेशों का उल्लंघन किया है। नतीजतन, मैं इन प्रतिवादियों को 15 दिनों की अवधि के लिए सिविल कारावास की सजा भुगतने और प्रत्येक को 1,000 रुपये का जुर्माना देने का निर्देश देता हूं। तदनुसार अवमानना याचिका की अनुमति दी जाती है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता

है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

सचिन सिंघल

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

हिसार , हरियाणा